अँधेरे में

हिन्दी ADDA

गजानन माधव मुक्तिबोध

अँधेरे में

एक रात को बारह बजे, ट्रेन से एक युवक उतरा। स्टेशन पर लोग एक कतार में खड़े थे और ज्यादा नहीं थे। इसलिए ट्रेन से नीचे आने में उसको ज्यादा कठिनाई नहीं हुई।

https://www.hindiadda.com/andhere-mein/

स्टेशन पर बिजली की रोशनी थी; परंतु वह रात के अँधियारे को चीर न सकती थी, और इसलिए मानो रात अपने सघन रेशमी अँधियारे से तंबूनुमा घर हो गई थी, जिसमें बिजली के दीये जलते हों। उतरते ही युवक को प्लेटफॉर्म की परिचित गंध ने, जिसमें गरम धुआँ और ठंडी हवा के झोंके, गरम चाय की बास और पोर्टरों के काले लोहे में बंद मोटे काँचों से सुरक्षित पीली ज्वालाओं के कंदीले पर से आती हुई अजीब उग्र बास, इत्यादि सारी परिचित ध्वनियाँ और गंध थे, उसकी संज्ञा से भेंट की। युवक के हृदय में जैसे एक दरवाजा खुल गया था, एक ध्वनि के साथ और मानो वह ध्वनि कह रही थी - आ गया, अपना आ गया

युवक झटपट उतरा। उसके पास कुछ भी सामान नहीं था, कोयले के कणों से भरे हुए लंबे बालों में हाथों से कंघी करता हुआ वह चला। पाँच साल पहले वह यहीं रहता था। इन पाँच सालों की अवधि में दुनिया में काफी परिवर्तन हो गया; परंतु उस स्टेशन पर परिवर्तन आना पसंद नहीं करता था। युवक ने अपने पूर्वप्रिय नगर की खुशी में एक कप चाय पीना स्वीकार किया। और वहीं स्टॉल पर खडा हो कर कपबशी की आवाज सुनता हुआ इधर-उधर देखने लगा। सब पुराना वातावरण था। परंतु इस नगर के मुहल्ले में बीस साल बिता चुकने वाला यह पच्चीस साल का युवक पुराना नहीं रह गया था। उसकी आत्मा एक नए महीन चश्मे से स्टेशन को देख रही थी।

टिकिट दे कर स्टेशन पर आगे बढ़ा तो देखता है कि ताँगे निर्जल अलसाए बादलों कि भाँति निष्प्रभ और स्फूर्तिहीन ऊँघते हुए चले जा रहे हैं। युवक ने इसी से पहचान लिया कि यह विशेषता इस नगर की अपनी चीज है।

दुकानें सब बंद हो चुकी थीं, जिनके पास नीचे सड़क पर आदमी सिलसिलेवार सो रहे थे। उनके साथी और उन्हीं के समान सभ्य पशुओं में से निर्वासित श्वान-जाति दुबकी इधर-उधर पड़ी हुई थी। युवक ने पैर बढ़ाने शुरू कर दिए। उखड़ी हुई डामर की काली सड़क पर बिजली की धुँधली रोशनी बिखर रही थी। एक ओर दुकानें, फिर सराय, फिर अफीम-गोदाम, फिर एक टुटपुँजिया म्यूनिसिपल पार्क, फिर एक छोटा चौराहा जहाँ डनलप टॉयर के विज्ञापनवाली दुकान और उसके सामने लाल पंप, फिर उसके बाद कॉलेज! और इस तरह इस छोटे शहर की बौनी इमारतें और नकली आधुनिकता इसी सड़क के किनारे-किनारे एक ओर चली गई थी। दूसरी ओर रेल का हिस्सा, जहाँ शंटिंग का सिलसिला इस समय कुछेक घंटों के लिए चुप था।

युवक को रात का यह वातावरण अत्यंत प्रिय मालूम हुआ। गरमी के दिन थे। फिर भी हवा बहुत ठंडी चल रही थी। सड़क के खुले हिस्से मे जहाँ रेल के तार जा रहे थे, नीम

और पीपल के वृक्ष के पत्ते झिरमिर-झिरमिर कर सघन आम के बड़े-बड़े दरख्त दूर से ही दीख रहे थे। उसी मैदान पर, एक ओर, एक नवीन मुहल्ला, शहर के अमीरों, व्यापारियों, अफसरों का उपनिवेश सिकुड़ा हुआ था।

सब दूर शांति थी। रात का गाढ़ा मौन था। युवक के रोजमर्रा के कर्मप्रधान जीवन में रोज रात का एक सोने का समय था, और सुबह के साढ़े आठ के अनंतर जागने का समय था। वैदिक ऋषि-मनीषियों के उष:सूक्त से लगा कर तो अत्याधुनिक छायावादियों के 'बीती विभावरी जाग री, अंबर पनघट ऊषा नागरी' का दर्शन इस युवक ने इस गए पाँच सालों में बहुत कम किया है।

अपने उस कर्म-जटिल क्षेत्र को पीछे छोड़ कर जैसे मनुष्य अपनी अरुचिकर यादों से बचना चाहता हो - यह युवक इस रात में पा रहा था कि वातावरण में पठार-मैदान से उठ कर आने वाली हवा की उत्फुल्ल और मीठी ताजगी के साथ-ही-साथ मानो मनुष्यों की सोई हुई चुपचाप आत्माएँ अपनी गाढ़ नीरवता में अधिक मधुर हो कर वन की सुगंध और वृक्ष के मर्मर में मिल गई हैं।

रेल की पटरियों के पार - रेलवे यार्ड में ही वहाँ के मध्यमवर्गीय नौकरों के क्वार्टर्स बने हुए थे। बाहर ही, जो उसका आँगन कहा जा सकता है; दो खाटें समानांतर बिछी हुई थीं जिनके बीच में एक छोटा-सा टेबल रखा हुआ था। उस पर एक आधुनिक लैंप अपनी अध्ययन समर्पित रोशनी डाल रहा था। एक खाट पर एक पुरुष कोई पुस्तक पढ़ रहा था और दूसरी पर घोर निद्रा थी। लैंप की धुँधली रोशनी में घर के सामनेवाले बाजू पर एक काला-सा अधखुला दरवाजा ओर बाँस की चिमटियों से बनाए गए बंद बरामदे के लेटे-से चतुष्कोण साफ दीख रहे थे। उस घर की पंक्ति में ही कई क्वार्टर्स और दीख रहे थे, उसी तरह पंक्तिबद्ध खाटें बराबर यथास्थान लगी हुई चली गई थीं।

युवक के मन में एक प्यार उमड़ आया! ये घर उसे अत्यंत आत्मीय-जैसे लगे, मानो वे उसके अभिन्न अंग हों!

यही बात उसकी समझ में नहीं आई। इस अजीब आनंदमय भावना ने उसके मन के संतुलित तराजू को झटके देने शुरू कर दिए। वह भावनाओं से अब इतना अभ्यस्त नहीं रह गया था कि उनका आदर्शीकरण कर सके। रोज का कठिन, शुष्क, जीवन उसे एक विशेष तरह का आत्मविश्वास-सा देता था। परंतु... आज...

वह बैठने वाला जीव न था। रास्ते पर पैर चल रहे थे। मन कहीं घूम रहा था। दूसरे उसे अत्यंत आत्मीय एकांत, जहाँ उसकी सहज प्रवृत्तियों का खुला बालिश खिलवाड़ हो बहुत दिनों से नहीं मिला था!

उसने सोचना शुरू किया कि आखिर क्यों यह अजीब जल के निर्मलिन सहस्त्र स्रोतों-सी भावना उसके मन में आ गई!

उसको जहाँ जाना था, वहाँ का रास्ता उसे मिल नहीं सकता था। एक तो यह कि पाँच साल के बाद शहर की गलियों को वह भूल चुका था। दूसरे जिस स्थान पर उसे जाना था, वह किसी खास ढंग से उसे अरुचिकर मालूम हो रहा था! इसलिए लक्ष्यस्थान की बात ही उसके दिमाग से गायब हो गई थी।

पैर चल रहे थे या उसके पैर के नीचे से रास्ता खिसक रहा था, यह कहना संभव नहीं, परंतु यह जरूर है कि कुछ कुत्ते-चिर जाग्रत रक्षक की भाँति खड़े हुए - भूँक रहे थे।

उसके मन में किसी अजान स्त्रोत से एक घर का नक्शा आया। उसका भी बरामदा इसी तरह बाँस की चिमटियों से बना हुआ था। वहाँ भी वासंती रातों में नीम के झिरिर-मिरिर के नीचे खाटें पड़ी रहतीं थीं। युवक को एक धुँधली सूरत याद आती है, उसकी बहन की-और आते ही फौरन चली जाती है। बस चित्र इतना ही। यह मत समझिए कि उसके माता-पिता मर गए! उसके भाई हैं, माता-पिता हैं। वे सब वहीं रहते हैं जिस शहर में वह रहता है।

युवक हँस पड़ा। उसे समझ में आ गया कि क्यों उन क्वार्टरों को देख कर एक आत्मीयता उमड़ आई। मजदूर चालों में, जहाँ वह नित्य जाता है, या उसके अमीर दोस्तों के स्वच्छ सुंदर मकानों में, जहाँ से वह चंदा इकट्ठा करता, चाय पीता, वाद-विवाद करता और मन-ही-मन अपने महत्व को अनुभव करता है - वहाँ से तो कोई आत्मीयता की फसफसाहट नहीं हुई। हमारा युवक अपने पर ही हँसने लगा। एक सूक्ष्म, मीठा और कटु हास्य।

दूर, एक दुकान पर साठ नंबर का खास बेलजियम का बिजली का लट्टू जल रहा था। सड़क पर ही कुरसियाँ पड़ी थीं, बीच मे टेबल था। एक आरामकुरसी पर लाल भैरोगढ़ी तहमत बाँधे हुए ताँगेवाले साहब बैठे हुए बिस्कुट खा रहे थे। दूसरी कुरसी पर एक निहायत गंदा, पीछे से फटी हुई चड्ढी पहने, उघाड़े बदन, लडका कभी बिस्कुटों के चूरे खाने की तरफ या भाप उठाते हुए टेबल पर रखे चाय के कप की तरफ देखता हुआ बैठा था! दूसरी कुरसी पर दूसरे मुसलमान सज्जन रोटी और मांस की कोई पतली वस्तु खा

रहे थे और बहुत प्रसन्न मालूम हो रहे थे। जो होटल का मालिक था वह एक पैर पर अधिक दबाव डाले - उसको खूँटा किए खड़ा था, सिगरेट पी रहा था और कुछ खास बुद्धिमानी की बातें करता था जिसको सुन कर रोटी और मांस की पतली वस्तु को दोनों हाथों का उपयोग कर खाने वाले मुसलमान सज्जन 'अल्लाहो अकबर' 'अल्ला रहम करे, इत्यादि भावनाप्लुत उद्गारों से उसका समर्थन करते जाते थे। सिगरेट का कश वह इतनी जोर से खींचता था कि उसका ज्वलंत भाग बिजली की भयानक रोशनी में भी चमक रहा था। उसका हाथ आराम से जंघा-क्षेत्र में भ्रमण कर रहा था।

दुकान के अंदर से पानी को झाड़ू से फेंकने की क्रिया में झाड़ू की कर्कश दाँत पीसती-सी आवाज और पानी के ढकेले जाने के बालिश ध्वनि आ रही थी, साथ ही उसके छोटे-छोटे कंकड़ों की भाँति लगातार बाहर उन्नत-वक्र रेखा-मार्ग से चले आ रहे थे। बिजली का लट्टू दरवाजे के ऊपर लगे हुए कवर के बहुत नीचे लटक रहा, था जिस पर लगातार गिरने वाले छींटे सूख कर धब्बे बन रहे थे।

इतने में पुलिस के एक गश्तवान सिपाही लाल पगड़ी पहने और खाकी पोशाक में आ कर बैठ गए! वे भी मुसलमान ही थे। उनकी दाढ़ी पर छह बाल थे, और ओठों पर तो थे ही नहीं। चालीस साल की उम्र हो चुकी थी पर बालों ने उन पर कृपा नहीं की थी। नाक उनकी बुद्धि से व्यापक थी, काले डोरे की गुंडी की भाँति चमक रही थी। आँख में एक चुपचाप दयनीयता झाँक उठती। वह कोई मुसीबतजदा प्राणी था - शायद उसे सूजाक था - या उसकी घरवाली दूसरे के साथ फरार हो गई थी! या वह किसी अभागी बदसूरत-वेश्या का शरीर-जात था। उसे न जाने कौन-सी पीड़ा थी जो चार आदमियों में प्रकट नहीं की जा सकती थी। वह पीड़ा-थीड़ा तो दूसरों के आनंद और निर्बाध हास्य को देख कर चुपचाप निबिड़ आँखों में चमक उठती थी! वह इस समय भी चमक रहीं थी, किसी ने उसकी तरफ ध्यान नहीं दिया। उसके सामने क्रमानुसार चाय आ गई और वह फुर-फुर करते हुए पीने लगा।

ताँगेवाले महाशय का ताँगा वहीं दुकान के सामने सड़क के दूसरे किनारे खड़ा था। घोड़ा अपने मालिक की भाँति बड़ा चढ़ैल और गुस्सैल था। एक ओर तो वह बिजली की रोशनी में चमकनेवाली हरी घास को बादशाह की भाँति खा रहा था, तो दूसरी ओर आध घंटे में एक बार अपनी टाँग ताँगे में मार देता था। उसके घास खाने की आवाज लगातार आ रही थी और उसका भव्य सफेद गंभीर चेहरा होटल को अपेक्षा की दृष्टि से देख रहा था।

ताँगेवाले महाशय ने चाय पीनी शुरू की। तगड़ा मुँह था। बेलौस सीधी नाक थी और उजला रंग था। ठाठदार मोतिया साफा अब भी बँधा हुआ था। बोलो-चाल निहायत शुस्ता और सलीके से भरी थी। चेहरा पर मार्दव था जो कि किसी अक्खड़ बहादुर सिपाही में ही सकता है। आज दिन में उन्होंने काफी कमाई की थी; इसीलिए रात में जगने का उत्साह बहुत अधिक मालूम हो रहा था।

दुकान के अंदर झाड़ू की कर्कश आवाज और पानी की खलखल ध्वनि बंद हो गई। छोटी-छोटी बूँदें टपकानेवाली मैली झाड़ू लिए एक पंद्रह साल का लड़का, एक घुटने पर से फटे पाजामे को कमर पर इकट्ठा किए खड़ा था कि मालिक का अब आगे क्या हुक्म होता है। परंतु बाहर मजलिस जमी थी। लाल साफेवाला सिपाही बड़ी रुचि के साथ उसे सुन रहा था। चाहता था कि वह भी कुछ कहे...।

इतने में इन लोगों को दूर से एक छाया आती हुई दिखाई दी। सब लोगों ने सोचा कि इस बात पर ध्यान देने की जरूरत नहीं! पर धीरे-धीरे आनेवाली उस छाया का सिर्फ पैंट ही दिखाई दिया और कुछ थकी-सी चाल! युवक चुपचाप उन्हीं की ओर आया और हलकी-सी आवाज में बोला 'चाय है?' उत्तर में 'हाँ' पा कर और बैठने के लिए एक अच्छी आरामदेह कुरसी पा कर वह खुश मालूम हुआ। लोगों ने जब देखा कि चेहरे से कोई खास आकर्षक या आसाधारण आदमी मालूम नहीं होता, तब आश्वस्त हो, साँस ले कर बातें करने लगे!

लाल पगड़ीवाला दयनीय प्राणी कुछ बोलना चाहता था! इतने मे उसके दो साथी दूर से दिखाई दिए! उन्हें देख कर वह अत्यंत अनिच्छा से वहाँ से उठने लगा। उसने सोचा था कि शायद है कोई, बैठने को कहे। परंतु लोगों को मालूम भी नहीं हुआ कि कोई आया था और जा रहा है!

'माधव महारज के जमाने में ताँगेवालों को ये आफत नहीं थी मौलवी सॉब! मैंने बहुत जमाना देखा है! कई सुपरडंट आए, चले गए, कोतवाल आए, निकल गए। पर अब पुलिसवाला ताँगे में मुफ्त बैठेगा भी, और नंबर भी नोट करेगा...' ताँगेवाले ने कहा।

होटलवाला जो अब तक मौलवी साहब से कुछ खास बुद्धिमानी की बात कर रहा था, उसने अब जोर से बोलना शुरू किया! धोती की तहमत बाँधे, बहुत दुबला, नाटे कद का एक अधेड़ हँसमुख आदमी था। वह बहुत बातूनी, और बहुत खुशमिजाज आदमी और अश्लील बातों से घृणा करनेवाला, एक खास ढंग से संस्कारशील और मेहनती मालूम होता था। उसने कहा, 'मौलवी सॉब, दुनिया यों ही चलती रहेगी। मैंने कई कारोबार किए। देखा, सबमें मक्कारी है। और कारोबारी की निगाह में मक्कारी का नाम

दुनियादारी है। पुलिसवाले भी मक्कार हैं - ताँगेवाले कम मक्कार नहीं हैं। वह जैनुल आबेदीन-मिर्जावाड़ी में रहने वाला... सुना है आपने किस्सा!'

मौलवी साहब ठहाका मार कर हँस पड़े। 'या अल्लाह' कहते हुए दाढ़ी पर दो बार हाथ फेरा और अपनी उकताहट को छिपाते हुए - मौलवी साहब को एक कप चाय और बिस्कुट मुफ्त या उधार लेना था - आँखों में मनोरंजन विस्मय - कुढ़ कर होटलवाले की बात सुनने लगे।

होटलवाले ने अपने जीवन का रहस्योद्घाटन करने से डर कर बात को बदलते हुए कहा, 'मैं आपको किस्सा सुनाता हूँ। दुनिया में बदमाशी है, बदतमीजी है। है, पर करना क्या? गालियों से तो काम नहीं चलता, क्यों रहीमबक्श (ताँगेवाले की ओर संकेत कर) ताँगेवाले बहुत गालियाँ देते हैं! दूसरे, सड़क पर से गुजरती हुई औरतों को देख - चाहे वे मारवाड़िनियाँ ही हों ढिल्लमढाल पेटवाली, बस इन्हें फौरन लैला याद आ जाती है! यह देख कर मेरी रूह काँपती है। मौलवी सॉब, मेरा दिल एक सच्चे सैयद का दिल है! एक दफा क्या हुआ कि हजरत अली अपने महल में बैठे हुए थे। और राज-काज देख रहे थे कि इतने में दरबान ने कहा कि कुछ मिस्त्री सौदागर आए हैं, आपसे मिलना चाहते हैं। अब उनमें का एक सौदागर आलिम था।'

मौलवी सिर्फ उसके चेहरे को देख रहे थे जिस पर अनेक भावनाएँ उमड़ रहीं थीं, जिससे उसका चिपका - काला चेहरा और भी विकृत मालूम होता था। दूसरे वह यह अनुभव कर रहे थे कि यह अपना ज्ञान बघार रहा है और ज्ञान का अधिकार तो उन्हें है। तीसरे, उन्होंने यह योग्य समय जान कर कहा, 'भाई, एक कप चाय और बुलवा दो।'

चाय का नाम सुन कर कुरसी पर बैठे हुए युवक ने कहा, 'एक कप यहाँ भी।'

पीछे से फटी चड्ढी पहने हुए गंदा लड़का ऊँघ रहा था! वह ऊँघता हुआ ही चाय लाने लगा। ताँगेवाला रहीमबख्श बातों को गौर से सुन रहा था। वह जानना चाहता था कि इस कहानी का ताँगेवालों से क्या संबंध है!

होटलवाले ने कहना शुरू किया, उनमें का एक सौदागर आलिम था। उसने हजरत अली का नाम सुन रखा था कि गरीबों के ये सबसे बड़े हिमायती हैं। शानो-शौकत बिलकुल पसंद नहीं करते। और अब देखता क्या है कि महल की दीवारें संगमरमर से बनी हुई हैं, जिसमें ख्वाब-कोहके हीरे दरवाजों के मेहराबों पर जड़े हुए हैं और चबूतरा काले चिकने संगमूसे का बना हुआ है। हरे-हरे बाग हैं और फव्वारे छूट रहे हैं। वह

मन-ही-मन मुसकराया। गरमी पड़ रही थी, और रूमाल से बँधे हुए सिर से पसीना छूट रहा था।

हजरत अली के सामने जब माल की कीमत नक्की हो चुकी, तो सौदागर उनकी मेहरबान सूरत से खिंच कर बोला, 'बादशाह सलामत! सुना था कि हजरत अली गरीबों के गुलाम हैं। पर मैंने कुछ और ही देखा है। हो सकता है, गलत देखा हो।'

सौदागर अपना गट्ठा बाँधते-बाँधते कह रहे थे। हजरत अली की आँख से एक बिलजी-सी निकली। सौदागर ने देखा नहीं, उसकी पीठ उधर थी, वह अपने माल का गट्ठा बाँध रहा था!

हजरत अली ने कहा, 'ज्यादा बातें मैं आपसे नहीं कहना चाहता। आप मुझे इस वक्त महल में देखते हैं, पर हमेशा यहाँ नहीं रहता। बाजार में अनाज के बोरे उठाते हुए मुझे किसी ने नहीं देखा है।' हजरत अली की आँखें किसी खास बेचैनी से चमक रहीं थीं!

वे रेशम का लंबा शाही लबादा पहने हुए थे। उन्होंने उसके बंद खोले। सौदागर ने आश्चर्य से देखा कि हजरत अली मोटे बोरे के कपड़े अंदर से पहने हुए हैं।

सौदागर ने सिर नीचा कर लिया।

सैयद होटलवाले की आँखों में आँसू आ गए। मौलवी साहब ने सिर नीचा कर लिया, मानो उन्हें सौ जूते पड़ गए हों। चाय की गरमी सब खतम हो गई। ताँगेवाले को इसमें खास मजा नहीं आया। युवक अपनी कुरसी पर बैठा हुआ ध्यान से सुन रहा था।

होटलवाले ने कहा, 'असली मजहब इसे कहते हैं। मेरे पास मुस्लिम लीगी आते हैं! चंदा माँगते हैं। मुस्लिम कौम निहायत गरीब है! मुझसे पाकिस्तान नहीं माँगते। मुझसे पाकिस्तान की बातें भी नहीं करते। हिंदू-मुस्लिम इत्तेहाद पर मेरा विश्वास है। लेकिन मैं जरूर दे देता हूँ। 'कौमी-जंग' अखबार देखा है आपने? उसकी पॉलिसी मुझे पसंद है। लाल बावटे वालों का है। मैं उन्हें भी चंद देता हूँ। मेरा ममेरा भाई 'बिरला मिल' में है। खाता कमेटी का सेक्रेटरी है। वह मुझसे चंदा ले जाता है।'

युवक अब वहाँ बैठना नहीं चाहता था। फिर भी, सैयद साहब की बातों को पूरा सुन लेने की इच्छा थी। मालूम होता था, आज वे मजे में आ रहे हैं।

रात काफी आगे बढ़ चुकी थी। होटल के सामने म्युनिसिपल बगीचे के बड़े-बड़े दरख्त रात की गहराई में ऊँघ-से रहे थे, जिनके पीछे आधा चाँद, मुस्लिम नववधू के भाल पर लटकते हुए अलंकार के समान लग रहा था।

नवयुवक जब और चलने लगा तो मालूम हुआ कि उसके पीछे भी कोई चल रहा है। उन दोनों के पैरों की आवाज गूँज रही थी। परंतु चाँद की तरफ (जिसकी काली पृष्ठभूमि भी कुछ आरुण्य लिए थी, मानो किसी मुग्ध रुचिर चेहरे पर खिली हुई लाल मिठास हो), जो घने दरख्तों के पीछे से उठ रहा था, वह युवक मुँह उठाए देखता जा रहा था। विशाल, गहरा काला, शुक्रतारकालोकित आकाश और नीचे निस्तब्ध शांति जो दरख्तों की पत्तियों में भटकने वाले पवन की क्रीड़ा में गा उठती थी।

युवक ऐसी लंबी एकांत रात में अर्ध-अपरिचित नगर की राह में अनुभव कर रहा था कि मानो नग्न आसमान, मुक्त दिशा और (एकाकी स्वपथचारी सौंदर्य के उत्सा-सा, व्यक्तिनिरपेक्ष मस्त आत्मधारा के खुमार-सा) नित्य नवीन चाँद से लाखों शक्ति-धाराएँ फूट कर नवयुवक के हृदय में मिल रही हों। नग्न, ठंडे पाषाण-आसमान और चाँद की भाँति ही - उसी प्रकार, उसका हृदय नग्न और शुभ्र शीतल हो गया है। द्रव्य की गतिमयी धारा ही उसके हृदय में बह रही है। पाषाण जिस प्रकार प्रकृति का अविभाज्य अंग है, मनुष्य प्रकृति पर अधिकार करके भी अपने रूप से उसका अविभाज्य अंग है।

चाँद धीरे-धीरे आसमान में ऊपर सरक रहा था। वृक्षों का मर्मर रात के सुनसान अँधेरे में स्वप्न की भाँति चल रहा था, परस्पर-विरोधी विचित्रगति ताल के संयोग-सा।

जो छाया दो कदम पीछे चल रही थी, वह नवयुवक के साथ हो गई। नवयुवक ने देखा कि सफेद, नाजुक, लाठी के हिलते त्रिकोण पर चाँद की चाँदनी खेल रही है; लंबी और सुरेख नाक की नाजुक कगार पर चाँद का टुकड़ा चमक रहा है, जिससे मुँह का करीब-करीब आधा भाग छायाच्छन्न है। और दो गहरी छोटी आँखें चाँदनी और हर्ष से प्रतिबिंबित हैं। उस वृद्ध मौलबी के चेहरे को देख कर नवयुवक को डी.एच. लॉरेन्स का चित्र याद आ गया! उस अर्द्ध-वृद्ध ने आते ही अपनी ठेठ प्रकृति से उत्सुक हो कर पूछा, 'आप कहाँ रहते है?'

वृद्ध के चेहरे पर स्वाभाविक अच्छाई हँस रही थी। इस नए शहर के (यद्यपि नवयुवक पाँच साल पहले यहीं रहता था) अजनबीपन में उसे इस मौलवी का स्वाभाविक अच्छाई से हँसता चेहरा प्रिय मालूम हुआ। उसने कहा, 'मैं इस शहर से

भलीभाँति वाकिक नहीं हूँ। सराय में उतरा हूँ। नींद आ रही थी, इसलिए बाहर निकल पड़ा हूँ।'

होटल में बैठा हुआ यह वृद्ध मौलवी सैयद से हार गया था, मानो उसकी विद्वत्ता भी हार गई थी। इस हार से मन में उत्पन्न हुए अभाव और आत्मलीन जलन को वह शांत करना चाहता था। 'सैयद सॉब बहुत अच्छे आदमी हैं, हम लोगों पर उनकी बड़ी मेहरबानी है।'

नयुवक ने बात काट कर पूछा, 'आप कहाँ काम करते हैं?'

'मैं मस्जिद मदरसे में पढ़ाता हूँ। जी हाँ, गुजर करने के लिए काफी हो जाता है।' उसकी आँखें सहसा म्लान हो गईं और वह चुप हो कर, गरदन झुका कर, नीचे देखने लगा। फिर कहा, 'जी हाँ, दस साल पहले शादी हो चुकी थी। मालूम नहीं था कि वह गहने समेट करके चंपत हो जाएगी। ...तब से इस मस्जिद में हूँ।'

युवक ने देखा कि बूढ़ा एक ऐसी बात कह गया है जो एक अपरिचित से कहना नहीं चाहिए। बूढ़े ने कुछ ज्यादा नहीं कहा। परंतु इतने नैकट्य की बात सुन कर युवक की सहानुभूति के द्वार खुल गए। उसने बूढ़े की सूरत से ही कई बातें जान लीं, वही दु:ख जो किसी-न-किसी रूप में प्रत्येक कुचले मध्यवर्गीय के जीवन में मुँह फाड़े खड़ा हुआ है।

'जी हाँ, मस्जिद में पाँच साल हो गए, पंधरा रुपया मिलते हैं, गुजर कर लेता हूँ। लेकिन अब मन नहीं लगता। दुनिया सूनी-सूनी-सी लगती है। इस लड़ाई ने एक बात और पैदा कर दी है - दिलचस्पी! रेडियो सुनने में कभी नागा नहीं करता। रोज कई अखबार टटोल लेता हूँ। जी हाँ, एक नई दिलचस्पी। किताब पढ़ने का मुझे शौक जरूर है। पर मैं तालीमयफ्ता हूँ नहीं। तो, गर्जे कि समझ में नहीं आती।'

बूढ़ा अपनी नर्म, रेशमी, सितार के हलके तारों की गूँज-सी आवाज में कहता जा रहा था। बातें मामूली तथ्यात्मक थीं, परंतु उनके आस-पास भावना का आलोकवलय था। उसकी जिंदगी में आहत भावनाओं की जो तर्कहीन शक्ति थी, वह उसकी बातों की साधारणता में अपूर्व वैयक्तिक रंग भर देती थी।

युवक को यह अच्छा लगा। प्रिय मालूम हुआ। एक क्षण में उसने अपनी सहानुभूति की जादुई आँख से जान लिया कि कोई असंगत (अजीब) मस्जिद होगी, जहाँ रोज चुपचाप लोग यंत्रचालित-सी कतार में प्रार्थना पढ़ते होंगे। और उसकी सूनी, खाली,

दूसरी मंजिल पर यह असंतुष्ट और जीवनपूर्ण अर्द्ध-वृद्ध छोटे-छोटे मैले-कुचैले लड़के-लड़कियों को दुपहर में पढ़ाता होगा। अपने लड़कों की ऊधम से परेशान माँ-बाप उन्हें काम में जुटाए रखने के लिए मदरसे में भेज देते होंगे, और यह अनमने भाव से पढ़ाता होगा और अपनी जिंदगी, दुनिया और दुपहर का सारा क्रुद्ध सूनापन इसके दिल में बेचैनी से तड़पता होगा...।

उसने मौलवी से पूछा, 'अपकी उम्र क्या होगी!'

युवक ने देखा कि मौलवी को यह सवाल अच्छा लगा। उसका चेहरा और भी कोमल होता-सा दिखाई दिया। उसने कहा, 'सिर्फ चालीस। यद्यपि मैं पचास साल के ऊपर मालूम होता हूँ। अजी, इन पाँच सालों ने मुझको खा डाला। फिर भी मैं कमजोर नहीं हूँ। काफी हट्टा-कट्टा हूँ।'

मौलवी यह सिद्ध करना चाहता था कि अभी वह युवक है। जीवन की स्वाभाविक, स्वातंत्र्यर्ण, उच्छृंखल आकांक्षा-शक्तियाँ उसके शरीर में तारल्य भर देती थीं। उसके चलने में, बातचीत में वह अंतिमता नहीं थी जो शैथिल्य और उदासी में पक्वता का आभास पैदा कर देती हैं। उसने चालीस ठीक कहा था और नवयुवक को भी उसकी बात पर अविश्वास करने की इच्छा न हुई।

'ओफ्फो, तो आप जवान हैं।' युवक ने थम कर आगे कहा, 'तो आपका दिमाग लड़ाई पर जरूर चलता होगा...'

'अरे, साहब! कुछ न पूछिए, सैयद साहब मुझसे परेशान हैं।'

'आप 'कौमी जंग' पढते हैं? आपके होटल में तो मैंने अभी ही देखा है।'

'कौमी-जंग तो हमारी मस्जिद में भी आता है! हमारे सबसे बड़े मौलवी परजामंडल के कार्यकर्ता हैं। जमीयत-उल-उलेमा हिंद के मुअज्जिज हैं। वहीं के उलेमा हैं। सब तरह के अखबार खरीदते हैं। यहाँ उन्होंने मुस्लिम-फारवर्ड ब्लॉक खोल रखा है।'

युवक को यहाँ की राजनीति में उलझने की कोई जरूरत नहीं थी। फिर भी, उससे अलग रहने की भी कोई इच्छा नहीं थी। इतने में एक गली आ गई जिसमें मुड़ने के लिए मौलवी तैयार दिखाई दिया। युवक ने सिर्फ इतना ही कहा, 'किताबों के लिए हम आपकी मदद करेंगे। अब तो मैं यहाँ हूँ कुछ दिनों के लिए। कहाँ मुलाकात होगी आपसे?'

'सैयद साहब की होटल में। जी हाँ, सुबह और शाम!'

मौलवी साहब के साथ युवक का कुछ समय अच्छा कटा। वह कृतज्ञ था। उसने धन्यवाद दिया नहीं। उसकी जिंदगी में न मालूम कितने ही ऐसे आदमी आए हैं जिन्होंने उस पर सहज विश्वास कर लिया, उसकी जिंदगी में एक निर्वैयक्तिक गीलापन प्रदान किया। जब कभी युवक उन पर सोचता है। उनके झरनों ने उनकी जिंदगी को एक नदी बना दिया। उनमें से सब एक सरीखे नहीं थे। और न उन सबको उसने अपना व्यक्तित्व दे दिया था। परंतु उनके व्यक्तित्व की काली छायाओं, कंटकों और जलते हुए फास्फोरिक द्रव्यों, उनके दोषों से उसने नाक-भौं नहीं सिकोड़ी थी। अगर वह स्वयं कभी आहत हो जाता, तो एक बार अपना धुआँ उगल चुकने के बाद उनके व्रणों को चूमने और उनका विष निकाल फेंकने के लिए तैयार होता। उनके व्यक्तित्व की बारीक से बारीक बातों को सहानुभूति के मायक्रोस्कोप (बृहद्दर्शक ताल) से बड़ा करके देखने में उसे वही आनंद मिलता था, जो कि एक डॉक्टर को। और उसका उद्देश्य भी एक डॉक्टर का ही था।

उसमें का चिकित्सक एक ऐसा सीधा-सादा हकीम था, जो दुनिया की पेटेंट दवाइयों के चक्कर में न पड़ कर अपने मरीजों से रोज सुबह उठने, व्यायाम करने, दिमाग को ठंडा रखने और उसको दो पैसे की दो पुड़िया शहद के साथ चाट लेने की सलाह देता था। सहानुभूति की एक किरण, एक सहज स्वास्थ्यपूर्ण निर्विकार मुसकान का चिकित्सा-संबंधी महत्व सहानुभूति के लिए प्यासी, लँगड़ी दुनिया के लिए कितना हो सकता है - यह वह जानता था! इसलिए वह मतभेद और परस्पर पैदा होने वाली विशिष्ट विसंवादी कटुताओं को बचा कर निकल जाता था। वह उन्हें जानता था और उसकी उसे जरूरत नहीं थी! दुनिया की कोई ऐसी कलुषता नहीं थी जिस पर उलटी हो जाय - सिवा विस्तृत सामाजिक शोषणों और उनके उत्पन्न दंभों और आदर्शवाद के नाम पर किए गए अंध अत्याचारों, यांत्रिक नैतिकताओं और आध्यात्मिक अहंताओं की तानाशाहियों को छोड़ कर! दुनिया के मध्यवर्गीय जनों के अनेक विषों को चुपचाप वह पी गया था, और राह देख रहा था सिर्फ क्रांति-शक्ति की! परंतु इससे उसको एक नुकसान भी हुआ था! व्यक्ति उसके लिए महत्वपूर्ण नहीं था, व्यक्तित्व अधिक, चाहे वह व्यक्तित्व मामूली ही हो और वह भी तभी जब तक उसकी जिज्ञासा और उष्णता का तालाब सूख न जाए।

उसकी उष्णता का दृष्टिकोण भी काफी अमूर्त था क्योंकि उसके व्यक्तित्व का उद्देश्य अमूर्त था। इसलिए अपने आप में व्यक्ति उससे यदा-कदा छूट जाता था, सिवा उनके जो उसकी धड़कनों और रक्त के साथ मिल गए हैं! हकिम मरीजों को

फौरन भूल जाते हैं, और मजे के लिए और मर्ज के साथ-साथ वे याद आते है। परिणामत: उसकी सहज उष्णता पा कर व्यक्ति उसके साथ एक हो जाते, अपने को नग्न कर देते; और फिर उससे नाना प्रकार की अपेक्षाएँ करने लगते जो संभव होना असंभव था।

मौलवी जब गली में मुड़ कर गया तो युवक की आँखें उस पर थीं। मौलवी का लंबा, दुबला और श्वेत वस्त्रवृत सारा शरीर उसे एक चलता-फिरता इतिहास मालूम हुआ। उसकी दाढ़ी का त्रिकोण, आँखों की चपल-चमक और भावना-शक्तियों से हिलते कपोलों का इतिहास जान लेने की इच्छा उसमें दुगुनी हो गई।

तब सड़क के आधे भाग पर चाँदनी बिछी थी और आधा भाग चंद्र के तिरछे होने के कारण छायाच्छन्न हो कर काला हो गया था। उसका कालापन चाँदनी से अधिक उठा हुआ मालूम हो रहा था।

युवक के सामने समस्याएँ दो थीं। एक आराम की, दूसरी आराम के स्थान की। और दो रास्ते थे। एक, कि रात-भर घूमा जाए - रात के समाप्त होने में सिर्फ साढ़े तीन घंटे थे और दूसरे, स्टेशन पर कहीं भी सो लिया जाए!

कुछ सोच-विचार कर उसने स्टेशन का रास्ता लिया।

उसके शरीर में तीन दिन के लगातार श्रम की थकान थी। और उसके पैर शरीर का बोझ ढोने से इनकार कर रहे थे। परंतु जिस प्रकार जिंदगी में अकेले आदमी को अपनी थकान के बावजूद भोजन खुद ही तैयार करना पड़ता है - तभी तो पेट भर सकता है - उसी प्रकार उसके पैर चुपचाप, अपने दु:ख की कथा अपने से ही कहते हुए अपने कार्य में संलग्न थे।

उसको एक बार मुड़ना पड़ा। वह एक कम चौड़ा रास्ता था जिसके दोनों ओर बड़ी-बड़ा अट्टालिकाएँ चुपचाप खडी थीं, जिसके पैरों-नीचे बिछा हुआ रास्ता दो पहाड़ियों में से गुजरे हुए रास्ते की भाँति गड्ढे में पड़ा हुआ मालूम होता था। बाईं ओर की अट्टालिकाओं के ऊपरी भाग पर चाँदनी बिछी हुई थी।

थकान से शून्य मन में नींद के झोंके आ रहे थे, परंतु एक डर था पुलिसवाले का जो अगर रास्ते में मिल जाए जो उसके संदेहों को शांत करना मुश्किल है! डर इसलिए भी अधिक है कि रास्ता अँधेरे से ढँका हुआ है, सिर्फ अट्टालिकाओं पर गिरी हुई चाँदनी के कुछ-कुछ प्रत्यावर्तित प्रकाश से रास्ते का आकार सूझ रहा है।

मन में शून्यता की एक और बाढ़। नींद का एक और झोंका। रास्ता दोनों ओर से बंद होने के कारण शीत से बचा हुआ है - उसमें अधिक गरमी है।

युवक कैसे तो भी चल रहा है! नींद के गरम लिहाफ में सोना चाहता है। नींद का एक और झोंका! मन में शून्यता की एक और बाढ़।

युवक के पैरों में कुछ तो भी नरम-नरम लगा - अजीब, सामान्यत: अप्राप्य, मनुष्य के उष्ण शरीर-सा कोमल! उसने दो-तीन कदम और आगे रखे। और उसका संदेह निश्चत में परिवर्तित हो गया। उसका शरीर काँप गया। उसकी बुद्धि, उसका विवेक काँप गया। वह यदि कदम नहीं रखता हैं तो एक ही शरीर पर - न जाने वह बच्चे का है या स्त्री का, बूढ़े का या जवान का - उसका सारा वजन एक ही पर जा गिरे। वह क्या करे? वह भागने लगा एक किनारे की ओर। परंतु कहाँ-वहाँ तक आदमी सोए हुए थे उसके शरीर की गरम कोमलता उसके पैरों से चिपक गई थी। वहीं एक पत्थर मिला; वह उस पर खड़ा हो गया, हाँफता हुआ। उसके पैर काँप रहे थे। वह आँखे फाड़-फाड़ कर देख रहा था। परंतु अँधेरे के उस समुद्र में उसे कुछ नहीं दीखा। यह उसके लिए और भी बुरा हुआ। उसका पाप यों ही अँधेरे में छिपा रह जाएगा! उसकी विवेक-भावना सिटपिटा कर रह गई; उसको ऐसा धक्का लगा कि वह सँभलने भी नहीं पाया। वह पुण्यात्मा विवेक शक्ति केवल काँप रही थी!

युवक के मन में एक प्रश्न, बिजली के नृत्य की भाँति मुड़ कर मटक-मटक कर, घूमने लगा - क्यों नहीं इतने सब भूखे भिखारी जग कर, जाग्रत हो कर, उसको डंडे मार कर चूर कर देते हैं - क्यों उसे अब तक जिंदा रहने दिया गया?

परंतु इसका जवाब क्या हो सकता है?

वह हारा-सा, सड़क के किनारे-किनारे चलने लगा! मानो उस गहरे अँधेरे में भी भूखी आत्माओं की हजार-हजार आँखें उसकी बुजदिली, पाप और कलंक को देख रहीं हों। स्टेशन की ओर जानेवाली सीधी सड़क मिलते ही युवक ने पटरी बदल ली।

लंबी सीधी सड़क पर चाँदनी आधी नहीं थी क्योंकि दोनों ओर अट्टालिकाएँ नहीं थीं; केवल किनारे पर कुछ-कुछ दूरियों से छोटे-छोटे पेड़ लगे हुए थे। मौन, शीतल चाँदनी सफेद कफन की भाँति रास्ते पर बिछती हुई दो क्षितिजों को छू रही थी। एक विस्तृत, शांत खुलापन युवक को ढँक रहा था और उसे सिर्फ अपनी आवाज सुनाई दे रही थी - पाप, हमारा पाप, हम ढीले-ढाले, सुस्त, मध्यवर्गीय आत्म-संतोषियों का घोर पाप। बंगाल की भूख हमारे चरित्र-विनाश का सबसे बड़ा सबूत। उसकी याद आते ही,

जिसको भुलाने की तीव्र चेष्टा कर रहा था, उसका हृदय काँप जाता था, और विवेक-भावना हाँफने लगती थी।

उस लंबी सुदीर्घ श्वेत सड़क पर वह युवक एक छोटी-सी नगण्य छाया हो कर चला जा रहा था।